खुशियों का अग्रदूतः मानसून

संध्या रायचौधरी

सदियों से भारतीयों को मानसून का इंतज़ार रहता है। आज भी यह भारतीय जीवन रेखा सरीखा है। यह हमारी परंपराओं, तीज-त्योहारों, गीत-संगीत और साहित्य में शिद्दत के साथ मौजूद है। चिलचिलाते सूरज के माथे पर जब बूंदों के आगमन की सूचना मिलती है तो उसी क्षण गरमी के प्रताप को सब लोग भूल जाते हैं। मानसून का प्रभाव केवल कृषि व्यवस्था, उद्योग और वातावरण पर ही नहीं अपितु भारतीय लोक साहित्य पर भी पड़ता है। मानसून आने पर केवल दादुर ही नहीं टर्राते, मोर ही नहीं नाचते बल्कि भारतीय कृषक, युवक-युवतियां सभी उल्लासमय होकर नाचने-गाने लगते हैं, झूमने लगते हैं।

पुर्तगाल से आया शब्द

अगर शब्द मानसून की बात करें तो इस अंग्रेज़ी शब्द की उपज पुर्तगाली भाषा के मान्सैओ से हुई है, लेकिन इसका उद्गम यानी स्रोत है अरबी भाषा का शब्द - मावसिम यानी मौसम। इसकी उत्पत्ति का एक सिरा डच भाषा के मानसून से भी जोड़ा जाता है। मूलतः मानसून शब्द का इस्तेमाल हिंद महासागर और अरब सागर की तरफ से देश के दक्षिण-पश्चिमी तट पर आने वाली बादलों से भरी नम हवाओं के संदर्भ में होता है जो जून से सितंबर के बीच भारत, पाकिस्तान और बांग्लादेश में भारी वर्षा कराती हैं। हालांकि वैज्ञानिक शब्दावली में मानसून का और व्यापक अर्थ मिलता है, जिसके अनुसार कोई भी ऐसी नम हवा जो किसी खास मौसम में किसी बड़े इलाके में ही ज़्यादातर वर्षा कराती है, मानसून कहलाती है। इस अर्थ से देखें, तो उप-सहारा अफ्रीका, ऑस्ट्रेलिया, पूर्वी एशिया और उत्तरी व दक्षिणी अमेरिका में भी किसी खास मौसम में होने वाली वर्षा को मानसून कहा जा सकता है। पर मानसून का ज़्यादा बड़ा संदर्भ भारतीय भूभाग में होने वाली वर्षा से ही है।

पूर्वानुमान की दो सदियां

वैसे तो हमारी धरती पर सदियों से जून से सितंबर के बीच मानसूनी बादल छाते रहे हैं और ज्येष्ठ-वैशाख की गर्मी में तपी धरती को जीवनदायिनी वर्षा से सींचते रहे हैं। इस मौसमी परिघटना को मानसून का नाम ब्रिटिश शासनकाल के दौरान दिया गया। यह नामकरण असल में मानसून की भविष्यवाणियों के संदर्भ में सामने आया, जिसका पहले कोई संस्थागत रूप नहीं था। देश में महाकवि घाघ आदि की कहावतों के रूप में ग्रामीण अंचलों में मानसून के आगमन की तिथियां ही बांची-बताई जाती थीं, ठीक उसी तरह जैसे अमेरिका के किसान दी ओल्ड फार्मर्स अल्मानैक नामक पंचांग को वर्षा के मामले में अधिक सटीक मानते रहे हैं। पर हमारे देश में पंचांग, ग्रह-नक्षत्रों, कहावतों से इतर विशुद्ध वैज्ञानिक तौर-तरीकों से मानसून की भविष्यवाणी की शुरूआत सन 1881 में तब हुई, जब भारत सरकार के मौसम रिपोर्टर एच.एफ. ब्लैनफोर्ड ने ऐसी पहली गैर सरकारी

भविष्यवाणी की थी। हालांकि भारतीय मौसम विभाग (आईएमडी) 1875 से मानसून की गतिविधियों पर नज़र रख रहा था, लेकिन सरकारी तौर पर इस विभाग ने पहला आधिकारिक पूर्वानुमान 1886 में जारी किया। तब से यह सिलसिला जारी है। 19वीं सदी के अंतिम दशकों में ही हमारे मौसम विभाग ने मानसून की भविष्यवाणी के लिए वे कारक तलाशने शुरू कर दिए थे, जिनके सहारे इसकी चाल-ढाल का पता चलता है। 1909 में भारतीय मौसम विभाग के महानिदेशक सर गिलबर्ट वॉकर ने भारत के संदर्भ में मई महीने को आदर्श मानते हुए इस अवधि में हिमालय पर्वत श्रृंखला पर जमी बर्फ, अप्रैल-मई के मध्य तंजानिया में हुई बारिश, मई में मॉरीशस तथा बसंत के मौसम में दक्षिणी अमेरिका में उत्पन्न वायुमंडलीय दबाव - इन चार कारकों का अध्ययन अनिवार्य बताया था। इसके बाद 1916 से इसमें पांचवें घटक के रूप में श्रीलंका में मई माह में हुई वर्षा का रिकार्ड भी जोड़ा जाने लगा।

मानसून की सटीक भविष्यवाणी के सिलसिले में भारतीय मौसम विभाग ने एक बार सोवियत संघ के साथ मिलकर मोनेक्स नामक कार्यक्रम भी चलाया था। इस शोध के जो नतीजे सामने आए, उससे गिलबर्ट वॉकर का पंच-कारक सिद्धांत नाकाफी साबित हुआ। मोनेक्स अध्ययन के अनुसार मानसून के लिए जो अनेक दूसरे कारक ज़िम्मेदार माने गए, उनमें मध्य एशिया और तिब्बती पठार की तपन, धरती और समुद्र के तापक्रम में आया अंतर, प्रशांत महासागर व चीन सागर से आने वाले समुद्री तूफानों की दर और एशियाई क्षेत्र में इस अवधि के दौरान बनने वाला वायुमंडलीय दबाव आदि प्रमुख थे। 1988 से आईएमडी जिन प्रणालियों के तहत इन मानकों का निर्धारण व अध्ययन करता है, उनमें सुपर कंप्यूटरों व उपग्रहों से प्राप्त जानकारी का कई प्रणालियों (पैरामीट्रिक रिग्रेशन प्रणाली, डायनेमिक स्टोकैस्टिक ट्रांसफर और मल्टीपल रिग्रेशन प्रणाली) से विश्लेषण से प्राप्त बुनियादी जानकारियों का इस्तेमाल किया जाता है।

कितना ज़रूरी मानसून

देश के करीब 32 करोड़ हैक्टर क्षेत्रफल में करोड़ों लीटर पानी बरसाने के लिहाज़ से मानसून सिर्फ हमारे लिए ही महत्वपूर्ण नहीं है, बल्कि विश्व की समूची जलवायु के लिए भी अनिवार्य है। पुणे स्थित इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ ट्रॉपिकल मेट्रोलॉजी के विज्ञानियों का कहना है कि दक्षिण-पूर्व एशियाई क्षेत्र इस मामले में दुनिया भर में विशिष्ट है कि यहां ऐसा भूभाग सबसे बड़ा है, जहां की धरती से बड़ी मात्रा में मिट्टी मानसूनी वर्षा के कारण बहकर समुद्र में पहुंचती है। समुद्र में भरने वाली यह गाद धरती के तापमान नियंत्रण में सहयोगी होती है, जो जलवायु और जलजीवों के अस्तित्व को बचाने के लिहाज़ से उपयोगी है।

हमारे लिए तो मानसून सच में भाग्यविधाता की भूमिका में होता है। मानसून का एक खराब सीज़न हमारी खेती से लेकर अर्थव्यवस्था तक पर काफी बुरा असर डाल सकता है। देश की 40 फीसदी खेती की सिंचाई का मानसून और साल में अन्य दिनों में होने वाली प्राकृतिक वर्षा के अलावा कोई अन्य साधन नहीं है, इसलिए किसान आज भी आकाश में छाने वाले बादलों का इंतज़ार करते हैं। गेहूं, चावल, गन्ना, कपास, चना, सरसों व दालों की बुवाई ऐसी ही वर्षा की मोहताज बनी हुई है। मानसून की कमज़ोरी से खेती ही नहीं, ग्रामीणों की खरीद क्षमता भी बुरी तरह प्रभावित होती है। आज की तारीख में देश की ग्रामीण आबादी ही 60 फीसदी उपभोक्ता वस्तुओं की खरीददार है। कम वर्षा देश में बिजली की मांग में भी इज़ाफा करती है। सूखे खेतों में सिंचाई के लिए डीज़ल के अलावा बिजली की खपत में काफी बढ़ोतरी होती है। बिजली का ज़्यादातर हिस्सा तो शहरों में रहने वाली एक चौथाई आबादी हड़प जाती है, गांव-कस्बों में रहने वाली दो-तिहाई आबादी के हिस्से में तो कुल उत्पादन की सिर्फ 10-12 फीसदी बिजली ही आती है। कमज़ोर मानसून इस संकट को और बढ़ा सकता है।

मानसून और अल नीनो

मानसूनी वर्षा में थोड़ी कमी बेशी अनहोनी बात नहीं है। जैसे 2009 में मानसून औसत से कम रह गया था और देश के कई इलाके भारी सूखे की चपेट में आ गए थे।

इस साल की शुरुआत में भी कई देशी-विदेशी

भविष्यवाणियां हो चुकी हैं, जिनमें कहा गया है कि अल नीनो नामक मौसमी परिघटना के कारण इस साल देश में सूखा पड़ सकता है। हालांकि खुद भारतीय मौसम विभाग ने इन भविष्यवाणियों को सही नहीं माना। उसके मुताबिक मानसून के सीजन के दौरान 96 फीसदी तक बारिश मुमकिन है, इसलिए सूखे की आशंका निर्मूल है। हाल ही में मौसम विभाग ने अपने पूर्वानुमानों में संशोधन करके 83 प्रतिशत वर्षा की संभावना जताई है जो खतरे का संकेत हो सकता है। जून से सितंबर के बीच सामान्य वर्षा का मतलब मानसून अवधि में 96 से 104 फीसदी बारिश होना है। यदि इसी अवधि में 110 प्रतिशत बारिश होती है तो उसे अतिरिक्त मानसून कहा जाता है। लेकिन मानसून के इन्हीं चार महीनों में यदि 80 फीसदी या इससे कम बारिश ही हो पाती है, तो कम वर्षा वाले इलाकों को सूखाग्रस्त माना जाता है।

अल नीनो स्पेनिश शब्द है। इसके शाब्दिक मायने हैं - नन्हा लड़का। दक्षिण अमेरिका के प्रशांत महासागर में क्रिसमस के फौरन बाद समुद्र का पानी अचानक असामान्य रूप से गर्म और ठंडा होने की घटना को सांकेतिक रूप से बालक ईसा मसीह से जोड़ा गया है। देखा गया है कि जिस साल अल नीनो की सक्रियता बढ़ती है, उस साल दक्षिण-पश्चिम मानसून पर उसका निश्चित असर पड़ता है। इससे पृथ्वी के कुछ हिस्सों में भारी वर्षा होती है तो कुछ हिस्से अकाल की मार सहते हैं। भारत में तो यह मानसून सीज़न में ही अपना असर दिखाता है, लेकिन इसकी सक्रियता 9 महीने तक होती है। अक्सर 2 से 7 साल के अंतराल में इसके सक्रिय होने का ट्रेंड देखा गया है।

कृत्रिम बादल

मानसून का विकल्प अभी तो नहीं है, लेकिन वैज्ञानिक इस मोर्चे पर चुप नहीं बैठे हैं। क्लाउड सीडिंग (कृत्रिम बादल) इसका विकल्प हो सकता है। भारत में इस विषय को उठाया जा चुका है। इस दिशा में अभी कुछ अरसे पूर्व इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ ट्रॉपिकल मेट्रोलॉजी, पुणे (आईआईटीएम) के वैज्ञानिकों ने क्लाउड सीडिंग को लेकर अध्ययन शुरू किया है। अध्ययन में यह पता लगाया जा रहा है कि देश में ऐसे कौन-कौन से इलाके हैं, जहां बादल तो बनते हैं, लेकिन अक्सर मानसून धोखा दे जाता है। क्लाउड सीडिंग से पूर्व कई और पैरामीटर देखे जाते हैं। इन स्थानों में मौजूद धूल कणों तथा अन्य तत्वों को भी मापा जाता है। ***(स्रोत फीचर्स)***

अगले अंक में....

स्रोत अगस्त 2015
अंक 319

- **घोंघे की विदाई महाविलोप का संकेत है**
- **3-डी छपाई - निर्माण की एक तकनीक**
- **प्रकाश की मदद से स्वर यंत्र को खोलें**
- **अस्थि मज्जा की खोजबीन एक मक्खी के ज़रिए**
- **विश्व के एक अरब लोग हो जाएंगे बहरे!**